सूख गयी हैं पलामू की दर्जनों नदियां

पलामू यानी स्थायी सुखाड़ व अकाल का घर. इंडियन इरिगेशन कमीशन (1929) ने पलामू को देश का सबसे सूखा व गरीब जिला माना था. आज भी यह सच है. आजाद भारत का सबसे भीषण अकाल 1967 में यहीं पड़ा था. तब 660 मिलीमीटर बारिश हुई थी. और करीब इतनी ही बारिश 2009 में हुई. आलम यह कि सुखाड़ व असमय पड़ी भीषण गरमी के कारण मार्च तक झारखंड की करीब 150 नदियां सूख गयीं. खोज परक रिपोर्ट पर शृंखला की पेश है पहली कड़ी...

अरविंद

पलामू क्षेत्र की कोयल, सदाबहा, दुर्गावती, अमानत, दानरो, कनहर, बबनदहा, जगलदगा, घरघरी, दोमुहान, चौपल आदि नदियां सूख गयी हैं. पनघटवा, घिरका, बांकी, कड़िया, चटनियाघाट, नावाडीह जैसे सैकड़ों तालाब व चेकडैम जलविहीन हैं. खेती-किसानी की बात क्या कहें, स्थिति इस कदर विकट है कि बेतला रिजर्व में वन्य जीव टैंकर से लाये पानी पर जीवित हैं.

बिरसा एग्रिकल्चर यूनिवर्सिटी के चियांकी (पलामू) स्थित क्षेत्रीय केंद्र के निदेशक डॉ डीएन सिंह बताते हैं कि : पलामू क्षेत्र में 1998 से 2007 के बीच 830 एमएम और 2009 में 650 एमएम वर्षापात रहा. 2007-09 के दौरान किसान धान की रोपनी नहीं कर पाये. 2009 में केवल 20 फीसदी ही धान ट्रांसप्लांट हुआ. जाहिर है, पलामू में इसके नतीजे कतई शुभ नहीं दिख रहे.

झारखंड बनने के दस वर्षों में दो अपवादों 2006-07 और 2007-08 को छोड़ दें, तो हर साल पलामू सहित कई इलाके सूखे की चपेट में रहे. 2005-06 और 2009-10 में समूचा राज्य सूखाग्रस्त घोषित था. बीते साल अगस्त-सितंबर 2009 में तीन चरणों में समूचे झारखंड को सूखाग्रस्त घोषित किया गया था. 16 अगस्त को केंद्रीय टीम जायजा लेने आयी थी. राज्य सरकार ने 890 करोड़ रुपये का पैकेज मांगा था. मगर अप्रैल, 2010 तक की खबर के अनुसार, राज्य को मिले 200 करोड़रुपये ही.

दरअसल, सूखा कोई मौसमी चीज भर नहीं है. उसका असर पूरे साल या कहें कि जीवन भर चलता है.

शेष पेज 11 पर

पेज एक का शेष

सूख गयी हैं...

भुखमरी व कुपोषण को छोड़ भी दें, तो रहन-सहन, गुणवत्तापूर्ण जीवन पर इसका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता. सुखाड़ देश के अन्य इलाकों में भी पड़ता है, पर पलामू जैसा कोलाहल इसलिए नहीं होता, क्योंकि वहां प्राकृतिक संसाधनों व वनों का क्षरण जैसी समस्याएं और अधिसंरचना व आजीविका के अन्य उपायों की कमी वैसी नहीं है. यही वजह है कि पलामू में 1859-60, 1873-74, 1896-97, 1899-1900, 1918-19, 1955-56, 1966-67 और 1992-93 में भयावह सुखाड़ के दौर आये हैं.

पलामू के उपायुक्त डॉ अमिताभ कौशल कहते हैं कि : यहां के 75 से 80 फीसदी लोगों का जीवन निर्वाह कृषि पर आश्रित है. और खेतिहर लोग सिंचाई के लिए बारिश पर ही निर्भर हैं. ऐसे में स्वाभाविक है कि सामान्य सुखाड़ से लेकर गंभीर अकाल जीवन निर्वाह कृषि को संकट में डाल देता है. हो भी क्यों न, भारत में 60 फीसदी खेती योग्य भूमि ही बारिश पर निर्भर है, जबकि झारखंड में यह निर्भरता 90 फीसदी जो है. ऐसे में इतिहासकार पुरुषोत्तम कुमार के शब्द सटीक जान पड़ते हैं कि 'मानसून की तानाशाही से किसानों को मुक्ति नहीं मिली है. इसी चिंता में भारतीय कृषक का जीवन दर्शन छिपा है.'

बिरसा एग्रिकल्चर यूनिवर्सिटी तथा सरकारी विभागों के दावों में भिन्नता के बाद आम राय यही है कि झारखंड में सिंचाई सुविधा 10 फीसदी के करीब है. चूंकि दक्षिण-पश्चिमी मानसून के चार महीनों में 80 फीसदी से अधिक बारिश होती है, इसलिए बाकी महीनों में अच्छी फसल की संभावना नहीं होने कारण झारखंड एकल फसली (मोनोक्रॉपिंग) वाला राज्य है.

प्रतिष्ठित विद्वान और सच्चे लोक प्रशासक रहे डॉ कुमार सुरेश सिंह के 1967 के अकाल पर लिखे शब्द गौरतलब हैं कि 'सुखाड़ प्रकृति प्रदत्त है, लेकिन अकाल मानवीय त्रुटियों से पैदा होता है.' पलामू में जमीनी स्तर पर काम करनेवाले विकास अर्थशास्त्री ज्यां द्रेज इसकी तस्दीक करते हैं कि 'सूखा एक भौगोलिक अभिशाप है, पर अकाल या बाद की सामाजिक व आर्थिक बदहाली जैसे परिणाम मानवजनित होते हैं.' जाने-माने अर्थशास्त्री प्रो रमेश शरण इसे 'राजनीतिक-आर्थिक सुखाड़' का नाम देते हैं. प्रसिद्ध भूगर्भशास्त्री डॉ नीतीश प्रियदर्शी बताते हैं कि 'नेतरहाट की पहाड़ियों के कारण पलामू का पूरा इलाका 'रेनशेडो' यानी वृष्टि छाया प्रदेश में पड़ता है. दुर्गम पठारी इलाके, सदा नीरा नदियों की कमी, गिरता भूजल स्तर, मृदा क्षय की गंभीर समस्याओं के कारण सुखाड़ एक नियमित आपदा बन गया है.' जाहिर है, इसके परिणामस्वरूप कृषि उपज में गिरावट, मौसमी बेरोजगारी से बढ़ते पलायन और भयावह गरीबी से दीर्घकालिक भूख की समस्या गहराती गयी है. राज्य की जीडीपी में कृषि का योगदान 28 फीसदी से अधिक है, जो अद्यतन राष्ट्रीय औसत 15.7 फीसदी से अधिक ही है. मगर 2005-06 के आंकड़े के अनुसार झारखंड ने देश के खाद्यान्न उत्पादन में महज 1.8 फीसदी का योगदान दिया. ऐसा इसलिए कि कम खेती व उत्पादकता के कारण झारखंड खाद्यान्न में कमीवाला राज्य है. फूडग्रेन डेफिसिट का गैप अमूमन 50 फीसदी से ऊपर ही रहता है. राज्य में कृषि संकट से निबटने के लिए जनवरी 2006 में प्रख्यात वैज्ञानिक डॉ केवी रमन की अध्यक्षता में कृषि सुधार, शोध व विकास पर आयोग बना. इसने मार्च 2008 में जारी रिपोर्ट में कृषि व जल नीति, किसान आयोग आदि बनाने की सिफारिशें की. मगर हाल तक कृषि व गन्ना विकास मंत्री रहे मथुरा महतो स्वीकार करते हैं कि 'अभी कृषि नीति पर विचार-विमर्श ही चल रहा है.'

चर्चा पुरातन अकाल की हो या फिर अद्यतन सुखाड़ की, बिहार के भोजपुर इलाके के प्राचीन मौसम विज्ञानी घाघ के कहे दोहे व कहावतें सटीक बैठते हैं जैसे : आवत आदर नहीं दिया, जात न दिन्हा हस्त. येहि कारण दोनो गये, पाहुन व गृहस्थ'. यानी आद्रा नक्षत्र की शुरुआत और हथिया नक्षत्र की आखिर में बारिश नहीं हुई, तो खेती नहीं होगी. ऐसे में घर में आये पाहुन या मेहमान की कोई गृहस्थ खातिरदारी नहीं कर सकता. 'सावन मास बहे पुरवैया, बैल बेच लेहू धेनु गय्या.' या 'रात निवदर दिन के छाया, कहे घाघ जे बरसा गया' जैसी लोकोक्तियां आज भी लौकिक व वाचिक परंपरा में यूं ही जीवंत नहीं हैं. **(जारी)**

(सीएसडीएस के इनक्लूसिव मीडिया फेलोशिप के तहत लिखा गया आलेख.)

PRABHAT KHABAR
16 JUNE, 2010
RANCHI